ISSN 2277 - 7539 (Print)
Impact Factor - 5.631 (SJIF)

Excel's International Journal of Social Science & Humanities

An International Peer Reviewed Journal

May - 2019
Vol. I No. 11

EXCEL PUBLICATION HOUSE
AURANGABAD

Scanned with CamScanner

13) **Brain Based Learning (BBL)** 81
Dr. Khan Shahnaz Bano Mohammad Ashfaque

14) **Technological Challenges in Higher Education** 90
Dr. Mirza Mahefooz Baig

15) **Development of Value added Products Utilizing Uncommon Green Leafy Vegetables** 95
Dr. Varsha S. Zanvar, Pradnya B. Dhutmal

16) **New growth in E-commerce digital marketing** 103
Mr. Gaikwad Deepak Devendra

17) **Teaching Aptitude of Teachers: A Need to Understand** 106
Dr. Pathan Md. Wasim Md. Shabbir

18) **"Drought and It's Effect on Human life"** 115
Dr. Vijay Baisane, Mr. Ankush Gaike

19) **उच्चशिक्षण आणि अजिवन शिक्षण**
डॉ.संजय मून 120

20) पूर्वांचल के लोकगीतों में श्रम सौंदर्य
संतोश नागरे 130

21) **धुळधान...!!**
डॉ. गणेश मोहिते 134

22) **औरंगाबाद शहरातील माध्यमिक स्तरावरील मराठी, उर्दू व इंग्रजी माध्यमातील इयत्ता नववीच्या विद्यार्थ्यांना सामान्य मानसिक क्षमतेचा तुलनात्मक अभ्यास**
डॉ. शेख सुभान हसन 139

23) ناول ''آنگار'' کا تنقیدی جائزہ
ڈاکٹر شرف النہار شیخ خلیل (شیخ) کبیر 151

24) ادب اطفال میں مہاراشٹر کی خواتین شاعرات
[illegible] 157

25) عالمی دنیا میں اردو زبان کے مسائل
[illegible] 163

Scanned with CamScanner

EXCEL'S INTERNATIONAL JOURNAL OF SOCIAL SCIENCE & HUMANITIES
(An International Multidisciplinary Journal)
Vol. 1 No.11 - April, 2019
ISSN 2277-7539 (Print)
Impact Factor 5.631 (SJIF)

पूर्वांचल के लोकगीतों में श्रम सौंदर्य

* संतोश नागरे

लोकसाहित्य में लोक जीवन पूरी सच्चाई के साथ सहज रुप में प्रतिबिम्बित होता है। जीवन की सम्पूर्ण यात्रा को अपनी खास शैली के माध्यम से लोकसाहित्य जन मानस को आईना दिखाने का काम करता है। लोकसाहित्य की व्यापकता तथा दिशादर्शकता के संदर्भ में डॉ.कमला सिंह कहती हैं, ''खेत से लेकर खलिहान तक, चुल्हा– चक्की से लेकर हाट तक, यहाँ तक की जन्म से लेकर मृत्यु तक की सम्पूर्ण यात्रा की कथा का सहज, सरस लोकार्पण लोक साहित्य में मिलता है। वस्तुतः लोकसाहित्य लोक मानस का ऐसा दर्पण है जिसमें लोकजीवन का समग्र चित्र गतिज अवस्था में प्रतिबिम्बित होता है। यह एक ऐसा आइना है जिसमें देश का भूत, वर्तमान और भविष्य तीनों ही एक साथ देखा तथा परखा जा सकता है। लोक मानस देश का सच्चा प्रहरी है जो ऐतिहासिक झंझावतों के बीच भाषा और संस्कृति की रक्षा करता है।''[1]

भारतीय संस्कृति श्रम सौंदर्य के माध्यम से श्रम की प्रतिष्ठापना करती है। 'वेद', 'उपनिषद', 'रामचरितमानस' आदि महत्वपूर्ण रचनाएँ श्रम संरक्षति तथा कर्मयोग की संवाहक है। श्रम के पीछे कार्यरत प्रेरक, पूरक तथा आहारक शक्तियाँ श्रम लोकगीतों को जन्म देती है। जीवन की खट्टी– मीठी अनुभूतियाँ श्रम लोकगीतों के माध्यम से अभिव्यक्ति पाती है। श्रम लोकगीत का सम्बन्ध मूलतः श्रमजीवी वर्ग के साथ रहा है। श्रमगीत समूह स्वर में गाये जाते हैं, अतः उसमें एकालाप न होकर समूह भावना अपने चरमोच्च रुप में दृष्टिगत होती है। अतः श्रम लोकगीत सामाजिक जीवन के महत्वपूर्ण दस्तावेज हैं। ''श्रमगीतों में सामान्य जन–जीवन की आशा–निराशा, सुख–दुख, हास–उल्लास का सजीव चित्रण हुआ रहता है। जनता के जीवन से सम्बन्ध रखनेवाले ये गीत जनता की संपत्ति है।... भारतीय जीवन की सच्ची कथा इन गीतों में चित्रित है। पारिवारिक जीवन के अनेकशः चित्र इन गीतों में रेखांकित हैं। सामाजिक अध्ययन के लिए अनेक उपयोगी सामग्री इन गीतों में संरक्षित है।''[2]

* सहा.प्रा.हिन्दी विभाग, र.भ. अट्टल महाविद्यालय, गेवराई जि.बीड

Scanned with CamScanner

भारत सांस्कृतिक दृष्टि से संपन्न राष्ट्र है। भारत का हर प्रदेश, आंचल लोकसाहित्य तथा लोकसंस्कृति की दृष्टि से संपन्न है। यह संपन्नता ही उसकी खास पहचान है। पूर्वांचल उत्तर प्रदेश के पूर्वी छोर पर स्थित पिछडा हुआ भौगोलिक क्षेत्र है। इसका क्षेत्र पूर्व में बिहार, पश्चिम में उत्तर प्रदेश के अवध, उत्तर में नेपाल तथा दक्षिण में मध्यप्रदेश के बघेलखण्ड तक बिखरा हुआ है। पूर्वांचल के अंतर्गत इलाहाबाद, वाराणसी, जौनपुर, मिर्जापुर, गाजीपुर, गोरखपुर, भदोही, कुशीनगर, बलिया, देवरिया, आजमगढ, मऊ, महाराजगंज, बस्ती, संत कबीर नगर, सिध्दार्थ नगर, सोनभद्र आदि जिले आते हैं। पूर्वांचल में हिंदी की भोजपुरी तथा अवधी जनभाषा का प्रचलन अधिक है। पूर्वांचल की जनता श्रमजीवी है। अतः पूर्वांचल या भोजपुरी में कई प्रकार के श्रम लोकगीत पाये जाते हैं। इनमें जँतसार, रोपनी, सोहनी, कटनी, भेड चराते समय के गीत, ऊख (गन्ना) बोते समय के गीत, कोल्हू चलाते समय के गीत, चाक चलाते समय के गीत, कहरवा या कहार जाति के लोकगीत, धोबिया गीत तथा राह के गीत महत्वपूर्ण हैं। **'जँतसार'** के गीत ग्रामीण महिलाएँ रात्रि के अंतिम पहर में जाँत पीसते समय गाती हैं। इन गीतों में श्रम, शिल्प और संगीत की त्रिवेणी का अदभूत संगम पाया जाता है। इन गीतों में नारी जीवन की पीडा छलक पडती है। धान रोपते समय महिलाएँ जो गीत गाती हैं उसे **'रोपनी'** के गीत कहा जाता है। हरिजन तथा मुसहर जाति की स्त्रियाँ रोपनी का कष्टसाध्य कार्य करती है। अतः इनके गीतों में पारिवारिक जीवन तथा पति–पत्नी के बीच के उपालम्भ की प्रधानता रहती है। धान की फसल में उगे अनावश्यक पौध को निकालते समय महिलाओं द्वारा गाये जानेवाले गीत को **'सोहनी के गीत'** कहा जाता है। इन गीतों में श्रृंगार और करुणा का भाव प्रमुख होता है। रोपनी– सोहनी के समय के गीतों में देश–प्रेम की झलक भी देखने को मिलती है। प्रियसी अपने प्रियकर को भूलकर भी पाकिस्तान न जाने के लिए गंगा की कसम देती है। वह अपने गीत के माध्यम से कहती है–

"कभी भूल के न जइहा पाकिस्तनियों,
कहनवाँ हमरो मनिहा पिअवा।
दिल घूमें के तोहार चलि जाया तू जापान,
तोहे गंगा की कसम जिनि जइहा पाकिस्तान,
हमें नींक लागे सारा हिन्दुस्तनवाँ
कहनवाँ हमरो मनिहा पिअवा।।"[3]

फसल काटते समय गानेवाले गीत को **'कटनी के गीत'** कहा जाता है। इन गीतों में उमंग और उल्लास चरम रुप में पाया जाता है। गोरखपुर मंडल में गन्ना बोते समय स्त्रियों द्वारा गाये जानेवाले गीत को **'ऊख बोते समय के गीत'** कहा जाता है। गडेरिया जाति के लोगों का व्यवसाय भेड–बकरियों को चराना है। अतः भेड चराते समय अपने अकेलेपन को दूर करने के लिए वे विभिन्न प्रकार के गीत गाते हैं। इन गीतों में अपने समसामयिक यथार्थ की स्पष्ट झलक देखने को मिलती

Scanned with CamScanner

है। वैश्वीकरण के इस दौर में पैसा ही मूल्य बन जाने से पारिवारिक व्यवस्था टूट रही है। परिवार विघटन की इस समस्या को गडेरिया अपने गीत के माध्यम से बयान करता है–

"जगतिआ में सुआरथ कइ व्यवहार
पूत कमाई के घर लावे माता करहीं दुलार।
बाप कहे मोर पूत सपूता अकिलवन्त हुसिआर।
पूत परल मेहरी के फन्दे नित उठि करे तकरार।
आधे में आधा लेई बटाइ, अलग होइ के खाय।।"[4]

तेली जाति के लोग तेल निकालते समय कोल्हुओं में बने स्थान पर बैठ कर जो गीत गाते हैं, उन्हें **'कोल्हू चलाते समय के गीत'** कहा जाता है। इन गीतों में भक्ति और श्रृंगार की प्रधानता पायी जाती है। कुम्हार जाति के लोग मिट्टी के बर्तन बनाते समय चाक चलाते हुए जो गीत गाते हैं, उन्हें **'चाक चलाते समय के गीत'** कहा जाता है। इन गीतों में भक्ति–भावना पायी जाती है। कहार जाति के लोग पुत्र जन्म, विवाह तथा विशेष अवसर पर नृत्य करते हुए जो गीत गाते हैं उन्हें **'कहरवा'** कहा जाता है। इन गीतों में श्रृंगार की प्रधानता होती है। कपड़े धोते समय धोबी जाति के लोग जो गीत गाते हैं उन्हें **'धोबिया गीत'** कहते हैं। राह चलते हुए थकान मिटाने के लिए जो गीत गाये जाते हैं उन्हें **'राह के गीत'** या **'क्लान्तिहारी गीत'** कहा जाता है। इन गीतों में सभी रस पाये जाते हैं। नायिका अपने नायक के विदेश जाने पर अपनी विरह व्यथा को बयान करती हुई कहती है–

'जब रे बलमुआँ गइले विदेसवाँ,
भराये पनिआँ भरि–भरि आये नयना।"[5]

गाँव और शहर में संस्कारगत अंतर होता है। शहरी नायिका देहाती नायक के अनुरुप अपने आप को ढाल नहीं पाती। ग्राम और शहरी जीवन के रहन–सहन, खान–पान, रीति–रिवाज, वेश–भूषा आदि के संस्कारगत अंतर को बयान करती हुई नायिका कहती है,–

"सइयाँ मिल गइल देहाती हम त सहर के लड़की।
हम त खाईं पूड़ी मिठाई, सइयाँ खाला भउरी,
भउरी सेकहूँ ना आवइ हम त सहर के लड़की।
हम त पीहीं झंझड सुराही सइयाँ पीयें भरुका,
भरुका भरहीं ना आवे हम त सहर के लड़की।
हम त खाईं पान बीड़ा सइयाँ खाले सुरती
सुरती ठोकहूँ ना आवे हम त सहर के लड़की।
हम त सोईं तोसक तकिआ सइयाँ सोवे गुदरी।
गुदरी सिअहीं ना आवे हम त सहर के लड़की।।"[6]

Scanned with CamScanner

ग्राम जीवन में सहजता होती है तो शहरी जीवन में असहजता। वैश्वीकरण के इस दौर में गॉव की सहजता नष्ट होती जा रही है। 'गीव एंड टेक', 'युज ॲड थ्रो' की इस उपभोक्तावादी संस्कृति में श्रम का अवमूल्यन होने से श्रमगीत लुप्त हो रहे हैं। डॉ. कमला सिंह इसे बचाने पर जोर देती हुई कहती हैं,– "भोजपुरी लोकगीतों का भंडार बडा ही विशाल है। उस विशाल भंडार में श्रमगीतों की संख्या सीमित हैं। यांत्रिकीकरण के बढते चरण से श्रम और श्रमगीतों पर संकट के बादल मंडरा रहे हैं। श्रम के बदलते स्वरुप से इनके लुप्त होने की आशंका प्रबल हो गई है। श्रमगीत का क्षेत्र सीमित है और बदलते परिवेश में इनके गायन का अवसर भी न्यून से न्यूनतर होता जा रहा है। अतः श्रमगीतों को लिपिबध्द करना सामयिक आवश्यकता है।"[1]

वैश्वीकरण की इस विध्वंस लीला से मानवीयता, मानवीय मूल्य, श्रम संस्कथति तथा विश्वशांति को बचाए रखने के लिए हमें अपनी सभ्यता एवं संस्कथति की जड **'वसुधैव कुटुम्बकम'** की ओर पुनः लौटना होगा। तभी इस देश की उजली विरासत को बचाया जा सकता है। जहीर कुरेशी इस संदर्भ में कहते हैं,–

"बचाना है अगर मुल्क की इस उजली विरासत को
हमें अपनी जडों की ओर फिर से लौटना होगा।"[8]

सारांश :

लोक जीवन की भावनाओं के साथ अभिन्न रुप से जुडे होने के कारण श्रमगीत लोगों की जुबान पर जीवित है। अतः उसे लिखित रुप देकर इस अनमोल धरोहर को सुरक्षित रखने के लिए हम सभी को प्रयास करना चाहिए।

संदर्भ ग्रंथ :

1. संपा. डॉ. कमला सिंह, पूर्वांचल के श्रम लोकगीत, भू.पृ.।।
2. वही, वही, भू.पृ. 14
3. वही, वही, पृ. 135
4. वही, वही, पृ. 156
5. वही, वही, पृ. 201
6. वही, वही, पृ. 204.
7. वही, वही, भू.पृ. 15.
8. संपा. डॉ.मधु खराटे, जहीर कुरेशी की चुनिंदा गजलें, पृ.82

Scanned with CamScanner